© 2018 IJSRST | Volume 4 | Issue 2 | Print ISSN: 2395-6011 | Online ISSN: 2395-602X
Themed Section: Science and Technology

प्राचीन भारत में स्त्रियों की दशा एवं दिशा

डॉ अजिता ओझा
73ई, ओम गायत्री नगर
इलाहाबाद

वैदिक साहित्य के अवलोकन से यह स्पष्ट हो जाता है कि तत्कालीन समाज में पुत्री का जन्म इतना चिन्ताजनक नहीं था जितना कालान्तर में हो गया था। पुत्रों की ही तरह पुत्री को भी उपनयन, शिक्षा–दीक्षा एवं यज्ञादि[1] के अधिकार प्राप्त थे। दोनों के सामाजिक और धार्मिक अधिकारों में अधिक अन्तर नहीं था। वैदिक साहित्य में अनेक विदुषी स्त्रियों के उल्लेख मिलते हैं जो पुरुषों की भाँति ही अपने–अपने विषय में पारंगत थीं। इनमें से अपाला, घोषा (ऋ0 10, 39, 40), लोपामुद्रा (ऋ0 1.179), विश्वारा (ऋ0 5.28), सिकता (ऋ0 28.91) और निवावरी (ऋ0 9.81) ने तो ऋषियों की भाँति ऋचाओं की भी रचना की। कदाचित उनकी विद्वता के कारण ही कुछ विदुषियों के पुत्रों के नाम उनकी माताओं के नाम से सम्बद्ध थे।[2] ऋग्वेद में भी इनका स्थान अदारणीय बताया गया है।[3] बृहदारण्यक उपनिषद्[4] में विदेहराज जनक की राजसभा में गार्गी तथा याज्ञवल्क्य के वाद–विवाद का वर्णन है जिससे ज्ञात होता है कि स्त्रियाँ न केवल सभाओं में भाग लेती थी बल्कि उनका बौद्धिक स्तर भी पुरुषों से कम न था।

बौद्ध साहित्यों में भी स्वयं महात्मा बुद्ध ने यह व्यवस्था दी है कि पुत्रहीन व्यक्ति भी मोक्ष का अधिकारी हो सकता है। महासुवण्ण नामक गृहस्थ[5] तथा ब्रह्मदत्त नामक व्यक्ति समान रूप से पुत्र अथवा पुत्री के लिए प्रार्थना करते दिखाई देते हैं। संयुक्तनिकाय[7] में तो स्वयं महात्मा बुद्ध का कथन है कि कभी–कभी पुत्री पुत्र की अपेक्षा अधिक श्रेयस्कर है।

अयाज्ञिक होने के कारण जैन धर्म के अन्तर्गत भी पुत्र प्राप्ति अनिवार्य न थी। भद्रबाहु का कथन है कि पुरुष केवल पुत्रवान होने से ही अधिक पुण्यवान नहीं हो जाता। अनेक पुत्रहीन पुरुष तीर्थंकर पद की प्राप्ति कर चुके हैं। इसके विरुद्ध बहुसंख्य सपुत्र व्यक्ति निम्न स्तर पर दृष्टिगत होते हैं। अतः जैन समाज व्यवस्था में पुत्र और पुत्री की स्थिति प्रायः समान है। पुत्र की भांति पुत्री की भी अपने माता–पिता की सम्पत्ति पर अधिकार था।[8] जातकों में भी कुछ बौद्ध कन्याओं का उल्लेख है जो दार्शनिक वाद–विवाद में भाग लेती थीं।[9] भवगती सूत्र में कौशाम्बी के राजा सहस्रनीति की पुत्री जयन्ती जो धर्म और दर्शन का उच्च ज्ञान रखती थी से

महावीर के साथ वाद–विवाद का उल्लेख है।[10] चन्दना नामक स्त्री जो चम्पा नरेश दधिवाहन की पुत्री थी, अपनी विद्वत्ता के कारण महावीर स्वामी के समय में जैन स्त्रीसंघ की अध्यक्षा बन गई थी। कल्पसूत्र का कथन है कि 20,000 जैन भिक्षुणियों ने अपनी ज्ञानशीलता तथा साधना से कर्म बंधन को नष्ट किया था।[11] निःसंदेह नवीन धर्मों के प्रसार ने स्त्री भिक्षुणियों की संख्या में भी विस्तार किया। थेरीगाथा में अनेक अविवाहित भिक्षुणियों का उल्लेख है। सुमेधा, अनोपमा आदि बौद्ध भिक्षुणियों तथा जयन्ती, मल्लि, सुभुमालिया, अज्ज चन्दणा आदि जैन भिक्षुणियों का उल्लेख जैन तथा बौद्ध साहित्य में मिलता है। ब्राह्मण–धर्म के अनुसार तो मोक्ष अथवा स्वर्ग की प्राप्ति के लिए विवाह अनिवार्य था, परन्तु बौद्ध–जैन धर्म के अनुसार विवाह न करना इसमें किसी भी प्रकार से बाधक न था।

मौर्यकाल में सर्वप्रथम ईरानी शासन व्यवस्था की तरह महिला अंगरक्षिकाओं का उल्लेख मिलता है जिनकी वीरता की प्रशंसा की गई है। चन्द्रगुप्त मौर्य के अतिरिक्त अन्य मौर्य शासक भी महिला अंगरक्षक रखते थे। इसके अतिरिक्त स्त्री गुप्तचरों के रूप में वृषली, भिक्षुकी तथा परिव्राजक का उल्लेख मिलता है जिनसे पता चलता है इस काल तक स्त्रियों की दशा पर्याप्त संतोषजनक थी।[12]

मौर्योत्तर काल में यवन, शक, पह्लव, कुषाण आदि विदेशी आक्रमणों के फलस्वरूप सामाजिक व्यवस्था में विच्छिन्नता दिखाई पड़ती है। विच्छिन्न होती सामाजिक व्यवस्था के ताने–बाने को बनाये रखने के लिए तत्कालीन व्यवस्थाकारों द्वारा कठोर नियमों का प्रतिपादन किया गया ताकि स्त्रियों की शुचिता और पवित्रता बनी रहे।[13] मनु[14] तथा याज्ञवल्क्य[15] ने स्त्रियों को स्वतन्त्र रहने के अयोग्य करार दिया। पराश्रितता का सिद्धान्त प्रतिपादित करते हुए कहा गया कि स्त्रियाँ जब तक कुमारी रहती हैं पिता उसका संरक्षक है, युवावस्था में पति संरक्षक है और वृद्धावस्था में पुत्र द्वारा संरक्षित होती हैं।[16] स्पष्टतः इस काल में स्त्री स्वतन्त्रता पूर्व की अपेक्षा बाधित हुई किन्तु माता[17] और पत्नी[18] के रूप में उन्हें विशेष सम्मान दिया जाता था। 100 गुरु से भी श्रेष्ठ एक पिता को और 100 पिता से श्रेष्ठ एक माता को दर्जा दिया गया है।[19] महाभारत में पत्नी को पति की अर्द्धांगिनी तथा बिना पत्नी के घर सुनसान कहा गया है।[20]

स्त्री सुरक्षा एक बहुत बड़ा प्रश्न था जिसके साथ सम्पूर्ण परिवार और कुल की प्रतिष्ठा जुड़ी रहती थी।[21] यही कारण था कि तत्कालीन व्यवस्थाकारों ने कन्या के विवाह को पिता के कर्तव्य के रूप में विहित किया।[22] मनु ने यहाँ तक व्यवस्था दे दी कि यदि पिता पुत्री का विवाह उचित समय (13–14 साल) तक नहीं कर पाता तो पुत्री स्वयं अपना विवाह कर सकती है।[23] संभवतः इसके पीछे स्त्रियों की सामाजिक और आर्थिक सुरक्षा बहुत बड़ी वजह थी क्योंकि विवाह विच्छेद की दशा में भी पत्नी की सुरक्षा तथा भरण–पोषण का उत्तरदायित्व व्यवस्थाकारों द्वारा पति या उसके सम्बन्धियों पर ही डाला गया था।[24] वह इस उत्तरदायित्व से

मुक्त नहीं हो सकता था। ऐसा लगता है कि इस समय तक जब स्त्रियों के भरण–पोषण की व्यवस्था कठिन हो गयी तो व्यवस्थाकारों द्वारा चल (सौदायिक) के साथ ही उन्हें अचल (असौदायिक) सम्पत्ति पर भी अधिकार दे दिया। परन्तु अचल सम्पत्ति बेचने का अधिकार उसे नहीं था क्योंकि वह परिवार की सामूहिक सम्पत्ति थी और विक्रय से परिवार के विखण्डित हो जाने का खतरा था।

गुप्त काल तक आते–आते हमें पर्दा प्रथा भी दिखाई देने लगती है। 510 ई0 के भानुगुप्त के एरण अभिलेख में सर्वप्रथम सती प्रथा का आभिलेखिक साक्ष्य मिलता है। पूर्व मध्यकाल तक सभी तरह की कुप्रथाएँ जैसे सती प्रथा, बाल विवाह, पर्दा प्रथा सभी के साक्ष्य प्राप्त होने लगते हैं। यद्यपि जनसाधारण में सती प्रथा या पर्दा प्रथा प्रचलित नहीं थी। इन कुप्रथाओं का अन्त 18वीं शताब्दी के पुनर्जागरण के बाद ही हो पाया।

संदर्भ :

1. कन्या वारयावती सोममपि स्युताविदत्।
   अस्तं भरन्त्यव्रवीदिन्हाय सुनवैत्वा।। – ऋग्वेद 8.91.1,
   एति प्राची विश्ववारा न मोभिवैवां ईलाना। – ऋग्वेद 5.28.1
2. यथा गार्गी पुत्र– बृह0उप0 6.4.30
3. ऋग्वेद 3.31, 1–2
4. बृहदारण्यक उपनिषद, 3.6 तथा 8
5. धम्मपाद टीका, श्लोक
6. जातक 52
7. संयुक्तनिकाय 3–2–6
8. भद्रबाहु संहिता 7–9, 17, विमल चन्द्र पाण्डेय, भारत वर्ष का सामाजिक इतिहास, अध्याय–3
9. जातक 301
10. भगवती सूत्र, भाग–3, पृ0 257, विमलचन्द्र पाण्डेय, वही
11. कल्पसूत्र 7, विमलचन्द्र पाण्डेय, वही, अध्याय–3
12. झा, श्रीमाली, प्राचीन भारत का इतिहास, आर0सी0 मजूमदार, एम0एल0 पुरी, प्राचीन भारत का इतिहास
13. डॉ0 अजिता ओझा, भारतीय समाज के सामाजार्थिक एवं धार्मिक परिप्रेक्ष्य, अध्याय–2
14. अस्वतंत्राः स्त्रियः कार्याः पुरुषैः स्वैर्दिवानिशम्।
    विषयेषु च सज्जन्त्यः संस्थाप्या आत्मनो वशे।। मनुस्मृति, 9.2

15. पितृमातृसुतभ्रातृश्वश्श्रूश्वशुरमातुलैः।
हीना न स्याद्विना भर्त्रा गर्हणीयाऽन्यथा भवेत्।। याज्ञवल्क्य स्मृति 1.86

16. पिता रक्षति कौमारे भर्ता रक्षति यौवने।
रक्षन्ति स्थविरे पुत्रा न स्त्री स्वातन्त्र्यमर्हति।। मनु0 9.3
रक्षेत्कन्यां पिता विन्नां पितः पुत्रास्तु वार्धके।
अभावे ज्ञातयस्तेषां न स्वातंत्र्यां क्वचितत्स्त्रियाः।। याज्ञ0 1.85

17. मातृष्वसा मातुलानी श्वश्रूरथ पितृष्वसा।
संपूज्या गुरुपत्नीवत्समास्ता गुरुभार्यया।। मनु0 2.131

18. महाभारत 144.5–6

19. मनुस्मृति 2.132–133

20. महाभारत 144,5–6

21. डॉ0 अजिता ओझा, पूर्वोद्धृत

22. मनु0 9.88–93; याज्ञ0 1.64

23. मनु0 9.99–91

24. याज्ञ0 1.70